राजनीतिक प्रजातंत्र बनाम सामाजिक प्रजातंत्र

– महमूद खान

बच्चों के साथ उन सामाजिक मुद्दों पर कक्षा–कक्ष में अवश्य बात करनी चाहिए जो उनके तथा आसपास के समुदायों/क्षेत्रों में घटित होती हैं और बच्चे उसके भागीदार बन रहे होते हैं। यदि हमने अपनी कक्षाओं में इस तरह के अवसर नहीं बनाए तो हमारे देश के भावी नागरिक एकांगी दृष्टिकोण लेकर आगे बढ़ेंगे तथा इससे लोकतंत्र के सामने नई चुनौतियां उभर कर आयेंगी।

पिछले कई महीनों से मैं लगातार यह सोच रहा हूं कि लगभग देश के हर कोने में लोग अपनी जायज और नाजायज मांगों के लिए संवैधानिक रास्तों को भूलकर गैर संवैधानिक रास्तों को अधिक अपना रहे हैं। उदाहरण स्वरूप हम देख सकते हैं कि मार्च 2018 में सर्वोच्च न्यायलय ने एससी/एसटी एक्ट पर अपना फैसला सुनाया था। देश भर में चौतरफा एससी/एसटी समुदाय के लोग फैसले के खिलाफ सड़कों पर उतरने लगे तथा 2 अप्रैल 2018 को भारत बंद का आह्वान किया गया। इस दौरान कई जगह पर लोगों की जान गई तथा करोड़ों रूपयों की सरकारी और निजी संपत्ति को क्षति पहुंचाई गई। इसी घटना पर 9 अप्रैल 2018 को सवर्ण समुदाय के कई संगठनों ने सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पक्ष में 'भारत बंद' बुलाया और एक बार फिर से आम जनता को भारी तकलीफों से गुजरना पड़ा। अभी देश पुराने आदर्शों और नए मूल्यों के बीच टकराहट के दौर से गुजर रहा है (सबरीमाला मंदिर में महिलाओं का प्रवेश)। एक तरफ सदियों पुरानी रूढ़ियां हैं, दूसरी ओर हमारे संवैधानिक मूल्य जिनकी रक्षा सर्वोच्च न्यायालय करता है।

मुझे बार–बार लगता है कि हम किस तरह के लोकतंत्र में रहते हैं, जहां आज भी लोग भीड़ की ताकत से फैसलों को प्रभावित करते हुए दिखाई देते हैं। अंग्रजों के दौर में संवैधानिक तरीके से संघर्ष करने के विकल्प न के बराबर थे, क्योंकि अधिकांश जनता या भारतीय समाज के पास अपना विधान बनाने, अपने अनुसार शासित होने के विकल्प नहीं थे। इसलिए आंदोलन और संघर्ष के वैकल्पिक तरीकों का उपयोग समझ में आता है। लेकिन संविधान लागू होने के पश्चात हमारे पास बहुतेरे विकल्प उपलब्ध हैं, जिनके माध्यम से हम अपनी मांगों और

प्रजातंत्र को केवल बाह्य स्वरूप में ही नहीं बल्कि वास्तव में बनाए रखने के लिए हमें क्या करना चाहिए? मेरी समझ से, हमें पहला काम यह करना चाहिए कि अपने सामाजिक और आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निष्ठापूर्वक संवैधानिक उपायों का ही सहारा लेना चाहिए। इसका अर्थ है, हमें क्रांति का खूनी रास्ता छोड़ना होगा। इसका अर्थ है कि हमें सविनय अवज्ञा आंदोलन, असहयोग और सत्याग्रह के तरीके छोड़ने होंगे। जब आर्थिक और सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने का कोई संवैधानिक उपाय न बचा हो, तब असंवैधानिक उपाय उचित जान पड़ते हैं। परन्तु जहां संवैधानिक उपाय खुले हों, वहां इन असवैधानिक उपायों का कोई औचित्य नहीं है। ये तरीके अराजकता के व्याकरण के सिवाय कुछ भी नहीं हैं और जितनी जल्दी इन्हें छोड़ दिया जाए, हमारे लिए उतना ही अच्छा है।

– डॉ. भीमराव अम्बेडकर (9 दिसम्बर,1946 का भाषण)

आकांक्षाओं की पूर्ति कर सकते हैं। लेकिन आज भी हम कुछ उस तरह के तौर–तरीके ही अपनाते हुए दिखाई देते हैं जिस तरह से हम औपनिवेशिक दौर में अंग्रेजों से लड़ने के लिए अपनाते थे। शायद इस आशंका के चलते ही अम्बेडकर जी ने संविधान सभा में दिए भाषण में जो चेतावनियां दीं उनमें से एक थी– एक प्रजातंत्र में जन आंदोलनों का स्थान। लेकिन भारतीय जन समुदाय शायद उन्हें याद नहीं रख पाया या उनको प्रशिक्षण ही नहीं मिला जो उन्हें संवैधानिक तरीकों से अपनी बात मनवाने की तरफ बढ़ाता।

इस तरह की घटनाएं हमारी भावी पीढ़ी को संवैधानिक तरीकों से दूर ले जायेंगी, तो फिर क्या करना चाहिए कि हमारी भावी पीढ़ी एक बेहतर नागरिक के रूप में तैयार हो सके। देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था और संवैधानिक मूल्यों के प्रति उनका सरोकार बन सके। इस घटना पर काफी विचार–विमर्श करने के बाद मेरे मन में सवाल आया कि, क्या इस तरह की घटनाओं को शैक्षिक विमर्श का मुद्दा नहीं बनाना चाहिए? सामाजिक विज्ञान विषय का शिक्षण शास्त्र क्या इस तरह के मुद्दों को कक्षा–कक्ष में डील करने के अवसर की ओर कुछ इशारा करता है? क्या इस तरह के शैक्षिक विमर्श समाज और देश की कुछ मदद कर सकते हैं? क्या स्कूलों में आने वाले बच्चों के साथ इस तरह के मुद्दों पर शैक्षिक विमर्श किया जाना चाहिए?

मैंने सरकारी स्कूल में इस विषय पर एक छोटा सा प्रयास करके देखा है उस प्रयास के दौरान हुए कक्षागत अनुभवों को इस आलेख के पहले भाग में रखना चाहता हूं। ये अनुभव एससी/एसटी एक्ट पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए फैसले के विरुद्ध भारत बंद के अगले दिन यानी 3 अप्रैल 2018 को जयपुर के एक सरकारी स्कूल के 9 वीं कक्षा के बच्चों के साथ किया गया विमर्श है। स्कूल के बच्चों के साथ ऐसा ही विमर्श का अवसर तब बना जब सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पक्ष में भारत बंद करवाया गया। बस फर्क यह था कि इस बार स्कूल दूसरा चुना गया।

दूसरे भाग में सामाजिक विज्ञान विषय से जुड़े नीतिगत दस्तावेज इस तरफ क्या इशारा करते हैं यह बताने का प्रयास करूंगा। अंत में दोनों बातों से निकलने वाले निष्कर्षों को रेखांकित करने का प्रयास रहेगा।

कक्षा–कक्षीय अनुभव : (दिनांकः 3 एवं 10 अप्रैल 2018)

मैंने बच्चों को सहज करने के उद्देश्य से अपना और अपनी संस्था का नाम बताया। फिर बच्चों से कहा कि हम आज आपस में चर्चा करेंगे। आप लोगों को जो भी कहना है वो अपनी जगह बैठे–बैठे ही कहना है, किसी को भी खड़े होने की जरूरत नहीं है। बच्चे ये सुनकर खुश नज़र आए।

मैंने बच्चों से सवाल किया कि कल स्कूल कौन–कौन आए थे? कक्षा में उपस्थित लगभग 18 बच्चों में (6 लड़के तथा 12 लड़कियों) से आधे ही स्कूल आए थे। जब पूछा गया कि इतने कम क्यों आए थे? तो जवाब मिला सर कल भारत बन्द था। दरअसल, मैं तो सोचकर ही गया था कि मुझे भारत बंद पर बच्चों से संवाद करना है। बातचीत को आगे बढ़ाते हुए मैंने कहा कि भारत बंद की वजह से कल देश भर में क्या–क्या हुआ ? बच्चों ने एक–एक कर कई बातें बताई,मसलन– बस और रेलों को रोका गया, छोटी गाड़ियों को तोड़ने का काम किया, थाने में आग लगाई गई, बसों को जलाया गया, दुकानों में लूटपाट तथा तोड़फोड की गई इसकी वजह से जयपुर शहर में लगभग 2500 करोड़ रूपये का व्यापारिक नुकसान हुआ आदि। मैंने इन सबको श्यामपट्ट पर लिख लिया था। मेरा अगला सवाल था कि इतनी सारी बातें तुम्हें कहां से पता चली? जवाब मिला सर आज के अखबार से। मैंने जानना चाहा कि कितने बच्चों के घर अखबार आता है तो पता चला कि 4 से 5 बच्चों के घर ही

अखबार आता है बाकी बच्चे स्कूल में होने वाले मुख्य समाचारों के वाचन को प्रार्थना सभा में सुनते हैं।

फिर बच्चों से पूछा कि भारत बंद किसने करवाया था और वो भारत को बंद क्यों करवाना चाहते थे? जवाब मिला कि एससी एवं एसटी समुदाय ने बंद करवाया था। लेकिन क्यों करवाया था इसकी स्पष्टता बच्चों को नहीं थी। मैंने बात बढ़ाने के लिए कहा कि अच्छा कल मैं भारत बंद करने लिए कहूंगा तो भारत बंद हो जायेगा? जवाब मिला आपके अकेले के कहने से नहीं होगा। तो इसका क्या मतलब हुआ? बच्चे एकदम चुप हो गए। मैंने फिर से कहा कि भारत बंद कराने से एससी एवं एसटी समुदाय को क्या मिला? बच्चों में से एक कोमल नाम की लड़की ने कहा कि सर उनकी मांग सरकार तक पहुंच गई। कक्षा में उपस्थित शिक्षिका ने कहा कि मांग पहुंचाने के लिए भारत बंद करना जरूरी था क्या? बच्चों ने कहा कि अपने अधिकार जब छीने जाते हैं तो ऐसे ही लड़ना पड़ता है। मैंने पूछा कौन सा अधिकार छीना गया और किसने छीना? कक्षा में एक बार फिर से सन्नाटा था।

बात आगे बढ़ाने के लिए मैंने कहा कि मुझे आप लोगों की बातचीत से दो तीन बातें समझ में आई हैं। पहली बात कि अपने अधिकारों के लिए लड़ना पड़ता है। दूसरी बात की मांग मनवाने या सरकार तक पहुंचाने के लिए रैली, प्रदर्शन तथा भारत बन्द जैसे कदम उठाने पड़ते हैं। तीसरी बात कि अकेले की बात कोई नहीं सुनता।

लेकिन यह बताओ कि भारत बंद जैसे कदमों का हमारे समाज पर किस तरह का प्रभाव पड़ता है? बच्चे एक साथ बोले सर इस तरह के बंद से जनता की परेशानी बढ़ जाती है। आपस में भी दंगे फसाद हो जाते हैं जिसमें कई बार लोग मर जाते हैं जैसे कल की हिंसा में ही 10 लोग मर गए। मैंने पूछा लोग आपस में क्यों झगड़ा करते होंगे? सोनी नामक बालिका बोली, सर जिन लोगों की मांग होती है वो अपने समर्थन में भीड़ बढ़ाने और बंद को सफल बनाने के लिए कई बार लोगों से जबरदस्ती बंद में शामिल होने का दबाव डालते हैं जिसकी वजह से आपस में झगड़ा हो जाता है। मैंने कहा कि किसी उदाहरण से बताओ। सोनी एवं कोमल ने कहा कि सर बाजार में हरिजनों की दुकान तो बहुत कम होती हैं सिर्फ उनकी दुकानों के बंद रहने से सरकार पर क्या फर्क पड़ने वाला था, इसलिए अपने समर्थन में जबरदस्ती दुकानों को बंद करवाया गया। जो दुकानदार बंद नहीं कर रहे थे उनके साथ भीड़ ने लूटपाट कर ली।

मैंने कहा कि यदि लोग भारत बंद में अपनी मर्जी से शामिल हों तो अच्छी बात है लेकिन किसी को जबरदस्ती शामिल करना क्या सही बात होती है? क्या यहां पर उनके अधिकारों का हनन नहीं हो रहा है। कक्षा में पढ़ने वाले राहुल का कहना था कि बात तो आपकी सही है, कल बहुत सारे लोगों को परेशानी उठानी पड़ी। जबरदस्ती तो किसी के साथ भी नहीं करनी चाहिए तथा अपने अधिकारों की लड़ाई में दूसरों के अधिकार छीनना तो उन पर अन्याय करने जैसा ही है।

मैंने एक बार फिर से पूछा कि आखिर एससी/एसटी का मुद्दा क्या था जिसके लिए भारत बंद बुलाना पड़ा। कोमल ने कहा सर, अभी कुछ दिन पहले सर्वोच्च न्यायालय का एक फैसला आया था, इस फैसले में कहा गया है कि एससी/एसटी एक्ट के अनुसार यदि किसी व्यक्ति के खिलाफ शिकायत दर्ज होती है तो उसकी जांच होगी तथा जांच में यदि शिकायत सही पाई गई तो उसके बाद ही गिरफ्तारी होगी। जबकि पहले यह था कि यदि किसी एससी/एसटी समुदाय के व्यक्ति को जाति सूचक शब्दों से बुलाया या अपमानित किया तो उसकी गिरफ्तारी शिकायत के साथ ही जरूरी होती थी, तथा किसी को भी अग्रिम जमानत नहीं मिल सकती थी।

कक्षा के कई बच्चों ने कहा कि सर हमें यह समझ नहीं आ रहा है कि एसटी/एससी एक्ट से संबंधित पहले के कानून एवं नये कानून में फर्क क्या है? मैंने एसटी/एससी एक्ट के प्रावधानों पर बात की जिसमें बताया कि पूर्व में कानून ये था कि, यदि कोई व्यक्ति या समुदाय एसटी/एससी के किसी व्यक्ति को उसके नाम की बजाए उसको जाति सूचक शब्दों से बुलायेगा या उसके साथ कोई ऐसा काम करेगा जिससे उसके सम्मान में कमी आती हो तो वह व्यक्ति अपने अधिकार के लिए पुलिस चौकी या थाने में रिपोर्ट लिखा सकता था। रिपोर्ट के बाद पुलिस कार्यवाही करते हुए उन लोगों को गिरफ्तार करने का काम करती थी, जिन्होंने उन पर अत्याचार किया था। लेकिन इस एक्ट के खिलाफ महाराष्ट्र हाईकोर्ट में एक याचिका दाखिल की गई। इस याचिका में कहा गया कि एसटी/एससी एक्ट का दुरूपयोग हो रहा है, बहुत से झूठे केस दर्ज किए जा रहे हैं। अतः इस कानून पर रोक लगनी चाहिए। हाई कोर्ट ने इस कानून में कोई बदलाव नहीं किया। अंत में ये केस

सुप्रीम कोर्ट में चला गया। इस केस की सुनवाई के बाद सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला सुनाया जिसमें कहा गया कि अब इस तरह के केस की रिपोर्ट केवल डी.एस.पी स्तर के अधिकारी ही ले सकते हैं। यानी पुलिस चौकी या थाने के अधिकारी या कर्मचारी रिपोर्ट नहीं लिख सकते। दूसरी बात ये कि अब रिपोर्ट की सच्चाई को पहले जांचा जायेगा। यदि वो सही पाई गई तो एस.सी. / एस.टी. एक्ट लागू होगा नहीं तो नहीं होगा।

मैंने बच्चों से पूछा कि इस पर इतना बवाल आखिर मचा क्यों ? बच्चों ने कहा कि ये तो नहीं पता लेकिन लोग कह रहे थे कि इस कानून को खत्म करके हमारे अधिकारों का हनन किया जा रहा है। मैंने बच्चों से कहा कि थोड़ी देर पहले आप लोगों ने अखबार में छपी भारत बंद की खबर और तस्वीर देखी थी। उसके आधार पर बताओ कि जब लोग बंद करवा रहे थे तो क्या इससे किसी और के अधिकारों का हनन नहीं हो रहा था ? क्या अधिकारों को प्राप्त करने का एक मात्र तरीका भारत बंद कराना ही है? या कोई और तरीका भी हो सकता है जिसमें किसी दूसरे के अधिकारों का हनन न होता हो? यहां पर कक्षा की एक बालिका ने कहा कि सर कानूनी तरीकों से भी अपने अधिकार लिए जा सकते हैं। तभी लविना नाम की बालिका ने कहा कि कोर्ट में बहुत समय लगता है इसलिए सरकार पर दबाव बनाने के लिए भारत बंद जैसे कदम लोग उठाते हैं। तो क्या समय बचाने के लिए हम ऐसा करते हैं? कक्षा से आवाज आई नहीं ये सब तो राजनीति करने वालों का काम है, ताकि समुदाय में उनकी पहचान बन जाए।

मैंने दोनों समुदायों के पक्षों को रखने का प्रयास किया कि दोनों ओर से किस–किस तरह के तर्क दिए जा रहे हैं। मुझे बात करते हुए यह समझ में आया कि दरअसल बच्चों को हाई कोर्ट एवं सुप्रीम कोर्ट के बारे में कोई खास जानकारी नहीं है। अतः यहां पर मेरे द्वारा न्याय व्यवस्था के ढांचों पर बच्चों के साथ संक्षिप्त बातचीत की गई।

मैंने सवाल उठाया कि यदि देश की सर्वोच्च अदालत ने कोई फैसला दे दिया है तो फिर क्या किया जा सकता है। बच्चों का जवाब था कि सरकार उसको बदल सकती है। मैंने कहा कैसे तो कक्षा में सन्नाटा था। कोमल ने कहा सर ये तो नहीं पता लेकिन अंकल कह रहे थे कि पहले भी हमारी सरकार ने सर्वोच्च अदालत का फैसला बदला है। इससे आगे उसकी जानकारी नहीं थी। यहां पर संक्षेप में शासन के तीनों अंगों की जानकारी दी गई तथा बताया गया कि कानून बनाने का काम संसद करती है। कानून संवैधानिक है या नहीं ये देखने का काम न्यायालय करता है तथा कानूनों का पालन हो रहा है या नहीं ये कार्यपालिका की जिम्मेवारी होती है। दरअसल में बच्चों को संसद, कार्यपालिका, न्यायपालिका आदि के बारे जानकारी न के बराबर थी। लेकिन मैंने यहां ज्यादा उलझना बेहतर नहीं समझा।

विधि (छात्र अध्यापिका) ने कहा कि सर्वोच्च न्यायालय ने कानून थोड़ा ही बदला है, उसने तो कहा है कि पहले जांच से सत्यता का पता लगाया जायेगा, उसके बाद कार्यवाही होगी। इसमें गलत क्या है ? वैसे भी इस कानून का बहुत बार गलत उपयोग लोग करते ही हैं। बच्चों के पास इस तर्क का कोई जवाब नहीं था। विधि ने कहा कि सर आप बताओ न, इसमें गलत क्या है ? मैंने कहा कि इसमें गलत कुछ है या नहीं इस नतीजे पर पहुंचने से पहले हमें एससी / एसटी का पक्ष भी जानना चाहिए। उन्होंने पूछा कि उनका पक्ष क्या है?

मैंने कहा कि उनका मानना है कि तमाम कानून होने के बावजूद भी पिछले सालों में एससी / एसटी समुदाय के उत्पीड़न के मामलों में 66 प्रतिशत बढ़ोतरी हुई है। दूसरी बात वो कहते हैं कि जो लोग दबंग होते हैं यदि उन्हें समय पर गिरफ्तार नहीं किया जायेगा तो क्या वो लोग निष्पक्ष जांच होने देंगे ? क्या वो लोग बाहर रह कर उस परिवार का जीना मुश्किल नहीं कर देंगे जिसने शिकायत की है, या उसे मजबूर नहीं कर देंगे केस वापस लेने के लिए आदि। विधि ने माना कि बहुत से दबंग लोग ये कर सकते हैं, लेकिन इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि दलित समुदाय इस कानून का दुरूपयोग नहीं करता होगा। इस बीच एक छात्र दूसरे छात्र की ओर इशारा करते हुए बोला कि सर कल ये भारत बंद की रैली में गया था। मैंने उत्सुकतावश पूछा और कौन–कौन रैली में गए थे? वहां क्या हो रहा था? पता चला कि कक्षा के चार बच्चे रैली में भाग लेने गए थे। उन्होंने बताया कि छोटे बच्चे नारे लगा रहे थे। कुछ बड़े लोग बहुजन समाजवादी पार्टी का झण्डा लेकर चल रहे थे। आने जाने वाले साधनों का रास्ता रोकने का प्रयास कर रहे थे। मैंने पूछा नारा कौन सा लगाया जा रहा था ? उन्होंने बताया कि कई नारे लगाये जा रहे थे, जैसे भीम राव अम्बेडकर अमर रहे, जय भीम, तानाशाही नहीं चलेगी, अभी तो ली

अंगड़ाई है आगे और लड़ाई है, दलितों पर अत्याचार नहीं सहेंगे आदि।

बात आगे बढ़ाने के लिए मैंने पूछा कि अम्बेडकर कौन थे तथा लोग इनकी जय क्यों बोल रहे थे? कक्षा का छात्र राहुल बोला सर ये एक पढ़े–लिखे हरिजन थे, इन्होंने ही भारत का संविधान लिखा था और एस.सी./एस.टी. समुदाय को आरक्षण भी इन्होंने ही दिलवाया था। इसलिए हमारा समुदाय इनको बहुत मानता है। इनकी बात खत्म हुई तो कोमल बोली सर डॉ. भीमराव अम्बेडकर संविधान सभा की प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे, इनकी संविधान बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका थी। यहां पर मैंने कहा कि आप सही कह रही हैं, दरअसल संविधान को बनाने में प्रारूप समिति जैसी कई और समितियां भी थीं जिनमें दूसरे लोग काम कर रहे थे। जब इन समितियों ने अपना काम कर लिया तो उसको संविधान सभा में प्रस्तुत किया गया तथा वहां दूसरे लोगों के सुझावों पर चर्चा की गई और आवश्यकता के अनुसार संशोधन भी किए गए। संविधान बनाने का काम संविधान सभा का था जिसमें अम्बेडकर जी की प्रमुख भूमिका रही।

संविधान में व्यक्ति को किस किस तरह की स्वतंत्रता दी गई है। स्वतंत्रता को समझाते हुए यह बताया गया कि संविधान में किसी को नुकसान पहुंचा कर अपनी बात मनवाने का कोई प्रावधान नहीं है, चाहे व्यक्तिगत नुकसान हो या फिर सरकारी सम्पति का नुकसान। जब सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुंचाते हैं तो उसको पुनः ठीक करने का सारा भार जनता पर ही आता है। इस तरह की तोड़फोड़ की वजह से टैक्स और महंगाई बढ़ती है। हम सबको अपने आस–पास हमेशा नज़र रखनी चाहिए कि यदि कोई गलत काम हो रहा है या हमें कोई गलत काम में शामिल होने के लिए उकसा रहा है तो हमें उनसे सवाल जरूर पूछने चाहिए। कई बार सवाल पूछने भर से आप उस समस्या से बच सकते हैं। घटना चाहे घर में घटित हो या समाज में या फिर अपने स्कूल में हमें उसे समझने का प्रयास करना चाहिए तथा अपने विवेक से अपना निर्णय करना आना चाहिए। किसी के कहने मात्र से किसी काम में शामिल नहीं होना चाहिए।

आमतौर पर समाज विज्ञान को पढ़ाने वाले शिक्षक गण स्कूली शिक्षा में अपनी पाठ्यपुस्तकों तक ही सीमित दिखाई देते हैं। जबकि सामाजिक विज्ञान के शिक्षण पर राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र कहता है कि, एक अर्थपूर्ण सामाजिक विज्ञान पाठ्यचर्या अपनी पाठ्य सामग्री के चयन व गठन द्वारा विद्यार्थियों में समाज की आलोचनात्मक जानकारी विकसित करने में समर्थ होती है, अतः यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। नए आयामों और सरोकारों को समाहित किए जाने की भी अनेक संभावनाएं हैं, विशेषकर विद्यार्थियों के अपने जीवन अनुभवों के आधार पर। हड़ताल, धरना–प्रदर्शन वर्तमान समाज और राजनीति में आम घटना है, जिससे समाज प्रभावित होता है। हमारी कक्षा में दो तरह के बच्चे मौजूद थे एक जो इन घटनाओं के दर्शक या इनसे प्रभावित लोगों का समूह था। दूसरा इसमें भागीदारी करने वाला समूह। दोनों के अपने–अपने अनुभव और अपना विश्लेषण था। लोकतंत्र, संवैधानिक मूल्य जैसे सैद्धांतिक मसलों पर बच्चों की राय का विश्लेषण करें तो कई व्यावहारिक पहलू खुलकर आते हैं। जैसे– कानूनी तरीके से अधिकार हांसिल किए जा सकते हैं। "अपने अधिकारों की लड़ाई के लिए दूसरे का अधिकार छीनना अन्याय है।" "दबाव बढ़ाने के लिए बंद या हिंसा को हथियार के रूप में इस्तेमाल करना" ऐसे कई सारे चर्चा के पहलू कक्षा में उभर कर आए जिन पर ठहर कर विस्तार से बात करने की जरूरत महसूस हुई। लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विरोध या आंदोलन का स्थान क्या है? अगर स्थान है तो उसका स्वरूप क्या हो? क्या लोकतांत्रिक संरचना में हिंसा स्वीकार्य है? अगर हिंसा होगी तो लोकतांत्रिक ढांचा कमजोर होगा या मजबूत आदि।

सामाजिक विज्ञान स्वतंत्रता, विश्वास, पारस्परिक सम्मान और विविधता के प्रति सम्मान जैसे मानवीय गुणों के लिए एक जनाधार का निर्माण करने और उसका विस्तार करने की नियामक जिम्मेदारी का वहन करता है। अतः सामाजिक विज्ञान शिक्षण का ध्येय बच्चों को एक नैतिक और मानसिक ऊर्जा प्रदान करना होना चाहिए ताकि वे स्वतंत्र रूप से सोच सकें और अपनी विशिष्टता खोये बिना उन सामाजिक बलों का सामना कर सकें जिनसे इन मूल्यों को खतरा है। सामाजिक विज्ञान शिक्षण इस उद्देश्य की प्राप्ति बच्चों में सामाजिक विषयों पर विवेचनात्मक चिंतन की योग्यता को बढ़वा देकर कर सकता है, जो व्यक्तिगत और सामाजिक हितों के बीच मौलिक सहभाव का वहन करते हैं।

आलोचनात्मक चिंतन के मद्देनजर शिक्षकों और

विद्यार्थियों दोनों के लिए एक ऐसी व्यापक पाठ्यचर्या की कल्पना की गई है, जिसमें ज्ञान प्राप्ति में बिना किसी दबाव के विद्यार्थियों और शिक्षकों की भागीदारी हो। ऐसी सहजता तथा सहभागिता के द्वारा ही विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए पठन–पाठन रुचिपूर्ण और आनंददायक बनाया जा सकता है। समाज में घट रही घटनाओं के उदाहरण से पाठ्यचर्या के विषय को जोड़ेंगे तो बच्चों को उसे विभिन्न तरीके से समझने और विश्लेषित करने के मौके मिलेंगे। सीखने की प्रक्रिया को परस्पर भागीदारी की प्रक्रिया बनाने के लिए आवश्यक है कि मात्र सूचनाओं के आदान–प्रदान के स्थान पर वाद–विवाद और परिचर्चा को प्राथमिकता मिले। अधिगम की यह विधि शिक्षकों और विद्यार्थियों को सामाजिक वास्तविकताओं के प्रति सचेत रखेगी।

अवधारणाओं को व्यक्तियों और समुदायों के सजीव अनुभवों द्वारा विद्यार्थियों को स्पष्ट किया जाना चाहिए। यह भी प्रायः देखा गया है कि सांस्कृतिक, सामाजिक और वर्ग–भिन्नता के कारण कक्षा में शिक्षकों के पूर्वाग्रह और पक्षपात की प्रवृति झलकती है। इसलिए शिक्षण के उपागम को बंधनमुक्त होने की आवश्यकता है। शिक्षकों को सामाजिक यथार्थ के विभिन्न आयामों की चर्चा कक्षा में करनी चाहिए और अपने आप में और विद्यार्थियों में स्वबोध बढ़ाने की दिशा में कार्य करना चाहिए।

सामाजिक विज्ञान विषय के नीतिगत दस्तावेज यह कहते हुए दिखाई देते हैं कि शिक्षक को शिक्षण के दौरान बच्चों की जिंदगी से जुड़े अनुभवों को कक्षा में स्थान देना चाहिए। लेकिन मेरा जितना भी अनुभव पिछले कुछ सालों का रहा है उसके आधार पर मैं कह सकता हूं कि बहुत ही कम शिक्षक ऐसे दिखाई दिए जो इस बात को सोच–विचार कर शिक्षण में शामिल करते हैं। अधिकतर सामाजिक विज्ञान विषय पढ़ाने वाले शिक्षक इस तथ्य को नज़र अंदाज ही करते दिखाई देते हैं। जहां तक पाठ्य पुस्तकों से बाहर निकलकर सामाजिक मुद्दों पर चर्चा का सवाल है वो तो मुझे कहीं दिखाई ही नहीं दिया। अक्सर शिक्षक अपनी बात में कहते हैं कि सर पाठ्यक्रम पूरा हो जाए यही काफी है। पुस्तक के बाहर के मुद्दों पर बात कब और कैसे करें? समय ही नहीं मिलता।

स्कूलों में आमतौर पर इस तरह के मुद्दों से बचने की कोशिश होती है। इसके दो संभावित कारण हो सकते हैं और दोनों ही उचित प्रतीत नहीं होते। या तो हमारे स्वयं के विचार इन मुद्दों के बारे में ऐसे हैं जिन्हें हम सार्वजनिक रूप से साझा नहीं करना चाहते, क्योंकि वो तर्कपूर्ण और संविधान सम्मत नहीं हैं। या हम छात्रों की मानसिक परिपक्वता को लेकर आश्वस्त नहीं हैं कि वो उन मुद्दों पर विचार कर पायेंगे। समकालीन मुद्दों में हमारी भावनाएं गुंथी होती हैं और उन्हें अलग कर तर्कपूर्ण चर्चा करना हमारे लिए संभव नहीं है। इसलिए अक्सर हम उन्हीं मुद्दों की बात करना चाहते हैं जो देश और काल दोनों में विस्थापित हों।

जबकि मेरा अनुभव कहता है कि बच्चे बहुत अच्छी तरह से ऐसे मुद्दों पर न सिर्फ चर्चा करते हैं बल्कि अपने विवेक से घटनाओं का विश्लेषण भी करते हैं। उदाहरण के लिए जब मैं बच्चों से भारत बंद के सामाजिक प्रभावों पर चर्चा कर रहा था तो उन्होंने कहा कि, सर जब हम गैर–कानूनी तरीकों से अपने अधिकारों की पैरवी करते हैं तो फिर समाज में आपसी टकराहट बढ़ जाती है। यदि हम संवैधानिक तरीके से अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करें तो इससे बच सकते हैं। तभी लविना नाम की बालिका ने कहा कि कोर्ट में बहुत समय लगता है इसलिए सरकार पर दबाव बनाने के लिए भारत बंद जैसे कदम लोग उठाते हैं। मैंने कहा तो क्या समय बचाने के लिए लोग ऐसा करते हैं ? कक्षा से आवाज आई नहीं ये सब तो राजनीति करने वालों का काम है,ताकि समुदाय में उनकी पहचान बन जाए। इस बातचीत से स्पष्ट हो जाता है कि 14–15 साल के बच्चे बहुत अच्छे से अपने आस–पास की घटनाओं का न सिर्फ अवलोकन करते हैं, बल्कि उन पर अपने अभिमत भी तैयार करते हैं।

अतः बच्चों के साथ उन सामाजिक मुद्दों पर कक्षा–कक्ष में अवश्य बात करनी चाहिए जो उनके तथा आसपास के समुदायों/क्षेत्रों में घटित होती हैं और बच्चे उसके भागीदार बन रहे होते हैं। यदि हमने अपनी कक्षाओं में इस तरह के अवसर नहीं बनाए तो हमारे देश के भावी नागरिक एकांगी दृष्टिकोण लेकर आगे बढ़ेंगे तथा इससे लोकतंत्र के सामने नई चुनौतियां उभर कर आयेंगी।

(लेखक अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन जयपुर, राजस्थान से जुड़े हैं।)